अध्याय 2

विकास की मनोवैज्ञानिक विधियाँ
(Psychological Methods of Development)

प्रत्येक विषय की अपनी विषय-वस्तु तथा विशिष्ट अध्ययन विधियाँ होती हैं। विकासात्मक मनोविज्ञान की विषय-वस्तु, सिद्धान्तों और अध्ययन विधियों पर मनोविज्ञान के विकास का बहुत प्रभाव पड़ा है। आधुनिक मनोविज्ञान के विकास के साथ विकासात्मक मनोविज्ञान के क्षेत्र में व्यापकता और विविधता आई है। इसने विकासात्मक मनोविज्ञान की अध्ययन विधियों को भी प्रभावित किया है। आज अपनी विषय-वस्तु, सिद्धान्तों तथा आधुनिक विधियों के कारण विकासात्मक मनोविज्ञान एक पूर्ण विज्ञान का रूप धारित कर चुका है। विकास के अध्ययन की विशिष्ट मनोवैज्ञानिक विधियाँ हैं। सभी मनोवैज्ञानिक विधियाँ विकासात्मक मनोविज्ञान के अध्ययन में समान रूप से उपयोगी नहीं हैं। वस्तुत: अनेक विधियों और उपागमों के द्वारा इसकी विविध विषय-वस्तु तथ्यों और समस्याओं का अध्ययन किया जाता है। उदाहरण के लिए गर्भावस्था और शैशवावस्था के शारीरिक विकास में प्रेक्षण, नियंत्रित प्रेक्षण और प्रयोगीकरण द्वारा प्रदत्तों का संग्रह किया जाता है। पूर्व बाल्यावस्था के विकास के अध्ययन में प्रत्यक्ष प्रेक्षण विधि उपयोगी मानी जाती है। उत्तर बाल्यावस्था, किशोरावस्था तथा प्रौढ़ावस्था के विकास में सहसंबन्धात्मक विधि, परीक्षण विधि प्रश्नावली तथा साक्षात्कार विधि उपयोगी हैं। विभिन्न अवस्थाओं में समायोजन समस्याओं के अध्ययन में मानसिक परीक्षण, साक्षात्कार तथा केस इतिहास विधियाँ प्रयुक्त होती हैं। वर्तमान समय में विकासात्मक मनोविज्ञान में निम्न विधियाँ प्रयुक्त हो रही हैं :

(i) प्रेक्षण विधि (The Observation Method) - मानव विकास के अध्ययन में प्रेक्षण विधि विशेष महत्त्व रखती है, क्योंकि शिशुओं और बच्चों के अनेकानेक व्यवहारों का अध्ययन इसके द्वारा सुगमतापूर्वक किया जा सकता है। जे.बी. वाट्सन (J.B. Watson) ने अमेरिका में छोटे बच्चों के प्राथमिक संवेगों के अध्ययन में इसका उपयोग किया। गेसेल (Gesell, 1955) ने प्रेक्षण में सर्वप्रथम मूविंग कैमरा (Moving Camera) का उपयोग किया और शुद्ध प्रदत्तों की प्राप्ति के प्रयास को वैज्ञानिकता प्रदान करने का प्रयास किया। वस्तुत: गेसेल ने प्रेक्षण विधि का जितना विकास किया है उतना किसी एक विकासात्मक मनोवैज्ञानिक ने नहीं किया।

प्रेक्षण की विधि में व्यवहार का निरीक्षण वास्तविक परिस्थितियों में किया जाता है।

Scanned by CamScanner

उसे अंकित और विश्लेषित किया जाता है। इसके द्वारा अनेक समस्याओं जैसे अधिगम, प्रत्यक्षीकरण, अभिप्रेरणा, संवेग, व्यक्तित्व, सामाजिक एवं सामूहिक व्यवहार आदि के विषय में प्राथमिक प्रदत्त एकत्र किये जाते हैं। इस विधि में निम्नलिखित चरण प्रमुख हैं :

1. अध्ययन योजना- प्रेक्षण आरम्भ करने के पूर्व अध्ययन की योजना तैयार की जाती है। प्रेक्षण की योजना के अन्तर्गत न्यादर्श के चयन के अन्तर्गत यह निश्चित किया जाता है कि अध्ययन किस समूह पर किया जाएगा और किस-किस प्रकार के व्यवहार का प्रेक्षण किया जाएगा। प्रेक्षण के क्षेत्र का परिसीमन, समय तथा उपकरण एवं प्रयोग में लाई जाने वाली सामग्रियों का ब्योरा तैयार करते हैं। यह सभी कुछ प्रेक्षण योजना का अंग है।

2. व्यवहार का प्रेक्षण- अध्ययन उद्देश्य या समस्या, जनसंख्या, उपकरण तथा सामग्रियों की योजना बनाकर वांछित व्यवहार का वास्तविक परिस्थितियों में प्रेक्षण किया जाता है। ऐसा करते समय समस्या से सम्बद्ध व्यवहार की ओर सर्वाधिक ध्यान दिया जाता है। प्रेक्षक इस कार्य में यथासम्भव तटस्थ रहने का प्रयास करता है, ताकि उसके मन का पक्षपात और उसकी अपनी अभिवृत्तियाँ परिणामों को दूषित न कर सकें। इस कार्य में वह उपकरणों की सहायता भी लेता है। प्रेक्षक यथासंभव तटस्थ रहकर अध्ययन करता है।

3. व्यवहार अंकन- प्रेक्षक व्यवहार के विषय में तथ्यों को अंकित करने का कार्य या तो प्रेक्षण के समय करता है या उसके तत्काल बाद करता है। साधन उपलब्ध होने पर कुछ प्रेक्षक मूविंग कैमरा, टेपरेकार्डर या वीडियो रेकार्डर जैसे उपकरणों का उपयोग भी करते हैं।

4. व्यवहार विश्लेषण- समस्या से सम्बद्ध सभी व्यवहारों का विश्लेषण, प्रेक्षण का मुख्य चरण है। जहाँ सम्भव होता है वह प्रेक्षित व्यवहार को अंकों में बदलता है और इस प्रकार प्राप्त अंकों को तालिकाबद्ध रूप देता है तथा वांछित सांख्यिकीय विधियों का उपयोग प्रदत्त व्याख्या में करता है। यदि अंकों में प्रेक्षित व्यवहार को बदलना सम्भव नहीं होता तो वह आवश्यकतानुसार अन्य आधारों के उपयोग द्वारा प्रदत्त विश्लेषण करता है।

5. व्याख्या तथा सामान्यीकरण- विश्लेषित व्यवहार की व्याख्या, पाँचवाँ प्रमुख चरण है। व्याख्या में विगत अध्ययनों तथा सिद्धान्तों का सहारा लिया जाता है। इस प्रकार प्रेक्षित व्यवहार के कारणों पर प्रकाश डालने का प्रयास किया जाता है तथा व्यवहार के विषय में सामान्य नियम प्रतिपादित किए जाते हैं। यह भी स्पष्ट किया जाता है कि प्रतिदर्श से प्राप्त परिणाम सामान्य जनसंख्या पर कहाँ तक लागू हो सकते हैं।

प्रेक्षण के प्रकार
(Types of Observation)

(i) व्यवस्थित, अनियंत्रित प्रेक्षण (Systematic, Uncontrolled Observation) - इस विधि में प्रेक्षण व्यवस्थित तो होता है किन्तु उद्दीपनों पर नियंत्रण नहीं होता।

Scanned by CamScanner

ऐसा प्रेक्षण प्राकृतिक परिस्थितियों में सहज भाव एवं सहज क्रिया द्वारा किया जाता है। व्यक्ति के साधारण जीवन में घटित स्वाभाविक परिस्थितियों को प्राकृतिक परिस्थितियाँ कहते हैं।

यंग (Young, 1954) के अनुसार, "अनियंत्रित प्रेक्षण में हम वास्तविक जीवन की परिस्थितियों की सतर्क छानबीन करते हैं, जिसमें यथार्थता के लिए यंत्रों के उपयोग का अथवा प्रेक्षित घटना की सत्यता की जाँच का कोई प्रयास नहीं करते हैं।" (In non controlled observation we resort to careful scrutinizing of real life situation, making no attempt to use instruments of precision or to check the accuracy of the phenomenon observed.)

इस प्रकार यह ऐसा प्रेक्षण है जिसमें वास्तविक जीवन की घटनाओं की सतर्क परीक्षा की जाती है। इसमें प्रेक्षित घटनाओं की शुद्धता के प्रयास में उद्दीपक परिस्थितियों को नियंत्रित नहीं करते। अत: प्रेक्षित परिस्थितियाँ स्वाभाविक और वास्तविक होती हैं।

इस विधि के अन्तर्गत अनेक तकनीकें प्रयुक्त होती हैं :

(i) चरित्र-अभिलेख (Narrative records) - चरित्र-अभिलेख का प्राचीन रूप बाल चरित्र (Baby biography) तकनीक में मिलता है, जिसमें बालकों के सभी व्यवहारों का प्रतिदिन प्रेक्षण किया जाता है। बार्कर तथा राइट (Barker & Wright, 1949, 1951) ने प्रेक्षकों की एक प्रशिक्षित टीम द्वारा प्रेक्षण पर बल दिया, जिनमें वे प्रत्येक बालक का आधा घंटे तक प्रेक्षण करते हैं। प्रात:काल से रात्रि तक बालकों की सभी क्रियाओं का प्रेक्षण प्रशिक्षित प्रेक्षकों द्वारा किया जाता है। बच्चों को प्रेक्षकों से मानूस (Habituate) होने के लिए कुछ समय दिया जाता है। कुछ समय पश्चात् बच्चे अपने कार्य-कलापों में इस तरह व्यस्त हो जाते हैं मानों कोई अपरिचित व्यक्ति (प्रेक्षक) मौजूद न हो। पूर्ण अभिलेख (Record) तैयार करने के उद्देश्य से प्रेक्षकों से कुछ प्रश्न किए जाते हैं ताकि कोई महत्त्वपूर्ण विवरण छूटने न पाए। इस प्रकार आधे घंटे के सत्र के विवरण के आधार पर अभिलेख तैयार किया जाता है, उसे समय-अनुक्रम के आधार पर व्यवस्थित किया जाता है। इस प्रकार अनेक प्रेक्षण सत्र काफी समय तक चलते हैं और अभिलेख तैयार किए जाते हैं। घटनाओं का कूट संकेतन तथा वर्गीकरण किया जाता है जिससे प्रदत्त विश्लेषण सुगम और सहज हो जाता है।

स्पष्ट है कि बालक को व्यापक मात्रा में उद्दीपन प्रदान करते हैं और कभी-कभी एक दिन में अनेक अधिगम परिस्थितियाँ उपलब्ध कराई जाती हैं। व्यवहार निर्धारण की प्रचुरता, पुनर्बलन और प्रतिपूर्ति इस तकनीक में उपलब्ध होती है और एक उद्दीपन-अनुक्रिया स्थिति में अध्ययन नहीं होता।

नियंत्रण के अभाव में प्रदत्तों की शुद्धता (Accuracy) और विश्वसनीयता संदिग्ध हो जाती है। इसी प्रकार कारण-प्रभाव (Cause-effect) संबन्धों की स्थापना संभव नहीं है। ऐसी दशा में यह नहीं कहा जा सकता कि अमुक व्यवहार अमुक कारणों से है। इन न्यूनताओं के बाद भी इस विधि में निम्न गुण हैं:

Scanned by CamScanner

(अ) विकास के विषय में व्यापक ज्ञान प्रदान कराती है।

(ब) मानव विकास का क्रमिक (Systematic) अध्ययन संभव है।

(स) यह विधि प्रयोग विधि के पूरक के रूप में प्रयुक्त होती है।

(द) डेनिस (Dennis; 1936) डेनिस तथा डेनिस (Dennis &Dennis; 1936) ने बड़े प्रतिदर्श पर अध्ययन कर दर्शाया कि इस विधि द्वारा प्राप्त प्रदत्त प्रतिनिधि (Representative) अध्ययन कहे जा सकते हैं।

(ii) परिस्थिति प्रतिदर्श (Situational Sampling) – यह उपरोक्त अभिलेख विधि के समान होती है जिसमें प्रेक्षक बार-बार होने वाली घटनाओं का चयन करता है और उन परिस्थितियों के प्रति बालकों की प्रतिक्रियाएँ व्यवस्थित रूप से अंकित की जाती हैं। कभी-कभी इसमें चुने हुए उद्दीपक प्राकृतिक परिस्थितियों में प्रस्तुत किये जाते हैं- जैसे अध्ययनकर्त्ता दो खिलौनों को क्रीड़ा अवधि में उपलब्ध कराकर यह नोट करते हैं कि लड़के-लड़कियाँ कितनी देर किस खिलौने के साथ खेलते हैं। कभी सामान्य खेल की दशा में यह देखते हैं कि खिलौनों को बच्चा कितनी बार दाएँ और कितनी बार बाएँ हाथ से उठाता है। कुछ दशाओं में मार्स्टन (Marston; 1925) द्वारा विकसित संग्रहालय तकनीक (Museum technique) प्रयुक्त की जाती है जिसमें विभिन्न सामग्रियों के प्रति बालकों की प्रतिक्रियाएँ नोट की जाती हैं। अथवा, कभी-कभी घर के भीतर बालक के व्यवहार की तुलना स्कूल, स्वतंत्र क्रीड़ा अवधियों, अध्यापक के सम्पर्क तथा एक या अनेक साथियों की उपस्थिति में घटित व्यवहार से करते हैं (Jersild and Meigs; 1939)।

इस तकनीक का महत्त्व व्यवहार की स्वाभाविकता और इसके सहजतापूर्वक घटित होने में है। इस तकनीक का उपयोग प्रौढ़ों पर भी होता है। छोटे बालकों के सामाजिक-सांवेगिक व्यवहार के अध्ययन में यह तकनीक विशेष रूप से उपयोगी सिद्ध हुई है।

इस परिस्थिति प्रतिदर्श तकनीक के एक परिमार्जित रूप के अन्तर्गत क्रान्तिक घटनाओं (Critical incidents) को अंकित किया जाता हैं (Flanagan; 1950)।

(iii) समय प्रतिदर्श (Time Samplimg) – प्रेक्षित तथ्यों को मात्रात्मक रूप प्रदान करने के लिए ओल्सन (Olson, 1929, 1934), गुडएनफ (Goodenough, 1928 a) और टामस तथा अन्य (Thomas et al, 1928) ने समय प्रतिदर्श तकनीक का विकास किया। इसके अन्तर्गत किसी प्रकार का नियंत्रण नहीं होता, परिस्थिति पूर्ण रूप से स्वाभाविक होती है। एक स्थिर समय अन्तराल में किसी चुने हुए व्यवहार के घटित होने की आवृत्ति अंकित (नोट) की जाती है। उदाहरण के लिए बालक "क" के व्यवहार का प्रेक्षण प्रथम दिन 2 मिनट के लिए किया जाता है। इसी प्रकार बालक "ख", "ग" आदि के साथ भी होता है। दूसरे दिन भी प्रत्येक बालक का प्रेक्षण 2-2 मिनट के लिए होता है, अन्तर यह है कि क्रम बदल देते हैं। इस प्रकार अनेक बार प्रेक्षण के आधार पर बारम्बारताओं का योग प्राप्त करते हैं। ऐसा प्रत्येक बालक के लिए किया जाता है। ऐसे अंकों का तत्काल सांख्यिकी विश्लेषण सम्भव होता है, जो इस तकनीक की एक प्रमुख विशेषता है। सम तथा विषम

Scanned by CamScanner

अवधियों के अंकों के आधार पर विश्वसनीयता का निर्धारण सम्भव है, जो इस तकनीक की एक अन्य प्रमुख विशेषता है। इन अंकों का अन्य कारकों से सहसंबन्ध ज्ञात करना भी सम्भव है। बार-बार घटित होने वाले व्यवहारों के अध्ययन की यह एक उत्तम तकनीक है। प्रेक्षण अवधि और प्रेक्षणों की संख्या अध्ययन किए जा रहे व्यवहार के प्रकार पर निर्भर करता है।

(iv) क्रीड़ा तकनीक (Play Technique) – प्रेक्षण के एक अन्य रूप में इसका व्यापक उपयोग नैदानिक मनोविज्ञान में होता है। वे इसका उपयोग निदान एवं उपचार में-विशेषकर समायोजन-समस्याओं में होता है। अनेक बालक प्रक्षेपी परीक्षणों में अनेक द्वन्द्व और भावनाओं को अभिव्यक्त नहीं कर पाते, वे जब स्वतंत्र और सुरक्षित वातावरण में विभिन्न खेल सामग्रियों से खेलते हैं तो इसके द्वारा उनकी दुश्चिन्ताएँ और इच्छाएँ स्वत: एवं स्वाभाविक रूप में अभिव्यक्त होती हैं। इस तकनीक में प्रयुक्त सामग्रियों में गुड़ियाँ, चाकू, चित्र बनाने और रंगने की सामग्रियों तथा कठपुतलियों आदि का उपयोग होता है (Fries, 1937; Frank; 1939; Despert, 1940; Axlin, 1947; and Bell, 1948)। नाटकीय खेलों में बालकों को लगाकर, कभी-कभी उनके व्यवहार का प्रेक्षण करते हैं। कभी-कभी क्रीड़ा और कभी-कभी उद्दीप्त-वार्ता के परिणामों का उपयोग भी होता है।

यह तकनीकें व्यवहार के सामान्यीकरण में प्रयुक्त होती हैं, जिससे बालकों के स्वभाव के विषय में अन्तर्दृष्टि प्राप्त होती है। यद्यपि इस तकनीक की विश्वसनीयता और वैधता अभी निर्धारित की जानी है, किन्तु बालकों के कुछ विशिष्ट व्यवहार-जैसे आक्रामक व्यवहार के अध्ययन में इसका सफल उपयोग होता है।

(v) व्यवस्थित या नियंत्रित प्रेक्षण (Systematic or Controlled observation) – इस विधि में चुने हुए नियंत्रित उद्दीपक प्रस्तुत किए जाते हैं। प्रस्तुत की गई सामग्रियाँ पहले से किसी मेज पर व्यवस्थित कर दी जाती हैं, उन उद्दीपनों या सामग्रियों के प्रति व्यक्तियों की अनुक्रियाओं का प्रेक्षण करके उन्हें यथाक्रम नोट किया जाता है। इस प्रकार यह विधि स्वाभाविक या अनियंत्रित निरीक्षण से भिन्न होती है। इसमें अध्ययनकर्त्ता परिस्थिति पर पूर्ण नियंत्रण रखता है। उद्दीपक परिस्थितियाँ प्रेक्षक के नियंत्रण में होती है। अत: यह विधि विगत विधि और उसमें प्रयुक्त तकनीकों से अधिक वैज्ञानिक होने के नाते विकासात्मक अध्ययनों में अधिक महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। अध्ययन परिस्थिति पर प्रेक्षक का नियंत्रण इसकी प्रमुख विशेषता है, जो व्यवहार की स्वाभाविकता को भी बनाए रखने का प्रयास करता है। प्रेक्षक द्वारा कोई निर्देश नहीं दिए जाते, इस प्रकार प्रयोज्यगण व्यवहार या अनुक्रिया के लिए पूर्णत: स्वतंत्र होते हैं। प्रेक्षक परिस्थितियों या संदर्भों को केवल इस तरह व्यवस्थित और नियंत्रित करता है कि व्यवहार या अनुक्रिया द्वारा उद्दीपक परिस्थितियों के प्रभाव प्राकृतिक रूप में अभिव्यक्त हो सकें।

परिस्थितियों को व्यवस्थित एवं नियंत्रित करते समय प्रेक्षक इस ओर विशेष ध्यान देता है कि व्यवहार का प्राकृतिक स्वरूप ज्यों का त्यों बना रहे और प्रायोगिक विधि की तरह व्यवहार के कृत्रिम होने की आशंका न रहे। यही मुख्य बात है जिसके अनुसार प्रेक्षण, प्रयोग विधि से भिन्न है।

Scanned by CamScanner

वीक (Weick, 1969) ने प्रेक्षण के स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि, "प्रेक्षण विधि का अभिप्राय बहुधा परिकल्पनाविहीन स्वतंत्र परीक्षा, प्राकृतिक सन्दर्भ में घटनाओं के प्रेक्षण, शोधकर्त्ता के हस्तक्षेप का अभाव, अचयनित विवरण संग्रह और अनाश्रित परिवर्त्य को हस्तादिकृत न करने से है।" (.....observation method is often used to refer to hypothesis free inquiry, working at events in natural surrounding, non intervention by the researcher, unselective recording, and avoidance of manipulation of independent variable.") प्रेक्षण की उपर्युक्त परिभाषा न केवल प्रेक्षण के स्वरूप वरन् प्रयोगात्मक विधि से इसकी भिन्नताओं पर भी स्पष्ट प्रकाश डालती है। प्रेक्षण की प्रक्रिया तथा इसके मुख्य चरणों का संकेत भी इसमें विद्यमान है।

विकासात्मक मनोविज्ञान में प्रेक्षण विधि विशेष महत्त्व रखती है। इसका मुख्य कारण इसका स्वरूप और अध्ययन क्षेत्र है। मानव विकास के अध्ययन में यह विधि विशेष रूप से उपयोगी है। इसकी उपयोगिता के ही कारण ओहियो राज्य विश्वविद्यालय (Ohio State University) में एक विशेष प्रकार के अध्ययन कक्ष का निर्माण किया गया है। इस कक्ष में बालकों के व्यवहार का विशेष प्रकार की नियंत्रित दशा में प्रेक्षण होता है। इसमें नियंत्रण इस प्रकार किया जाता है कि स्वाभाविक एवं स्वतंत्र व्यवहार नियंत्रण से प्रभावित हुए बिना घटित हो सकता है। इसके अन्तर्गत केवल परिस्थितिपरक चरों (Situational variables) का नियंत्रण होता है, किन्तु प्रयोज्य का व्यवहार इन कारकों के प्रभाव से मुक्त रहता है।

नियंत्रित प्रेक्षण का उपयोग जर्मनी से आरम्भ हुआ, जहाँ शिशुओं की संवेदी अनुक्रियाओं का अध्ययन इसके द्वारा किया गया। जे.बी. वाट्सन (J.B. Watson, 1925) ने अमेरिका में इसका उपयोग शैशवावस्था में संवेगों के विकास संबन्धी अध्ययनों में किया। गेसेल (Gesell, 1932, 1935) ने इस विधि का उपयोग बड़े बालकों की अनेक समस्याओं के संबन्ध में किया। उसकी व्यवस्था में 24 घंटे तक निरन्तर उन्हीं प्रयोज्यों का निरीक्षण होता था। प्रेक्षक के बैठने की व्यवस्था इस प्रकार की जाती थी कि प्रयोज्यों की दृष्टि से ओझल रहकर वह प्रेक्षण करता था। प्रेक्षण का कार्य एक समय में प्रेक्षकों की एक पूरी टीम द्वारा किया जाता था। मूविंग कैमरा द्वारा प्रयोज्यों की प्रत्येक अनुक्रिया का चलचित्र तैयार करते थे। इस कार्य द्वारा प्राप्त प्रदत्तों की शुद्धता बढ़ जाती है। यह प्रेक्षणशाला गेसेल (Gesell) ने अमेरिका के येल विश्वविद्यालय (Yale University) में स्थापित की थी। अनेक दूसरे देशों के विकासात्मक मनोवैज्ञानिकों ने गेसेल (Gesell) की सतत् व्यवस्थित प्रेक्षण (Continued systematic observation) विधि का अनुप्रयोग वैकासिक अध्ययनों में सफलतापूर्वक किया (Buhler, 1930; Barker, 1930; and Loomis, 1931)।

क्रमबद्ध एवं नियंत्रित प्रेक्षण के गुण (Merits of Systematic or Controlled Observation)

नियंत्रित प्रेक्षण में निम्न विशेषताएँ होती हैं :

Scanned by CamScanner

(i) अध्ययन के आरम्भिक चरण में उपयोगिता - किसी प्रश्न का समाधान ढूँढने के प्रयास की आरम्भिक दशा में प्रेक्षण की विधि अत्यन्त उपयोगी रही है। समस्या और परिकल्पना के निर्माण में इसका विशेष उपयोग है। किसी विषय पर आवश्यक तथ्य उपलब्ध होते हैं अतः परिकल्पना के निर्माण तथा अध्ययन विषय को परिभाषित करने में इसकी भूमिका महत्त्वपूर्ण मानी जाती है।

(ii) शिशुओं तथा पशुओं के व्यवहार के अध्ययन में उपयोगी- शिशुओं का प्रयोगशाला अध्ययन कठिन होता है। साथ ही, वे सामाजिक-सांस्कृतिक प्रभावों से मुक्त होते हैं। अतः उनके प्राकृतिक व्यवहार के अध्ययन में प्रेक्षण विधि का विशेष महत्त्व है। पशु-पक्षी भी सामाजिक-सांस्कृतिक प्रभावों से मुक्त होते हैं, अतः उनका प्रेक्षण भी महत्त्वपूर्ण प्रदत्त प्रदान करता है।

(iii) वस्तुनिष्ठता- वस्तुनिष्ठता इस विधि की वस्तुतः एक अत्यन्त प्रमुख विशेषता है, जिसके कारण नियंत्रित प्रेक्षण सम्प्रति में और भी उपयोगी माना जाने लगा है। आधुनिक उपकरणों के उपयोग से इसकी वस्तुनिष्ठता में सन्देह नहीं किया जा सकता।

(iv) निश्चितता (Precision) - परिणामों में निश्चितता वैज्ञानिक विधि की एक अनिवार्यता है जो काफी मात्रा में नियंत्रित प्रेक्षण में देखी जाती है।

(v) विश्वसनीयता एवं वैधता- किसी विधि के वैज्ञानिक होने के लिए उसे विश्वसनीय और वैध होना चाहिए। यह अनिवार्यता नियंत्रित प्रेक्षण में विद्यमान होती है। अर्थात् प्रेक्षण द्वारा प्राप्त प्रदत्तों की विश्वसनीयता और वैधता निश्चित करना सम्भव है। उपर्युक्त कारणों से यह विधि अत्यन्त उपयोगी मानी जाती है।

प्रेक्षण विधि के दोष
(Demerits of Observation Method)

प्रेक्षण की विधि विकास के अध्ययन में विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण होते हुए भी अपनी कुछ न्यूनताओं के कारण सीमित हो जाती है। इसकी प्रमुख सीमाएँ निम्नलिखित हैं:

(i) कठोर नियंत्रण का अभाव- प्रेक्षक द्वारा भरसक प्रयत्न के बाद भी इस विधि में कठोर नियंत्रण बहुधा स्थापित होना कठिन होता है। कारण यह है कि प्रेक्षक प्राकृतिक व्यवहार का प्रेक्षण करना चाहता है। अतः इतना कठोर नियंत्रण नहीं लागू करता कि परिस्थिति वास्तविकता से दूर हो जाए और व्यवहार की स्वाभाविकता समाप्त हो जाए।

(ii) अप्रकट व्यवहार का अध्ययन नहीं हो पाता- प्रेक्षण केवल प्रकट व्यवहार का सम्भव है, अप्रकट व्यवहार का प्रत्यक्ष प्रेक्षण नहीं हो सकता। उदाहरण के लिए व्यक्ति के अनुभव, अभिवृत्तियाँ, स्थायी भाव, मूल्यों आदि के द्वारा व्यक्ति के अप्रकट व्यवहारों का मापन हो सकता है, किन्तु प्रत्यक्ष प्रेक्षण द्वारा अप्रकट पक्ष का अध्ययन सम्भव नहीं है। यह इस विधि की मुख्य न्यूनता है।

Scanned by CamScanner

(iii) प्रयोज्यों के बाह्याडम्बर तथा मिथ्या आचरण- जिन व्यक्तियों का प्रेक्षण किया जाता है वे किसी-न-किसी रूप में इस बात से अवगत हो जाते हैं। ऐसा होने पर उनमें स्वचेतना (Self consciousness) उत्पन्न हो जाती है और वे प्रेक्षक के ऊपर अपना अच्छा प्रभाव डालने का प्रयास करने में अपने प्राकृतिक व्यवहार को छिपाने का प्रयत्न कर सकते हैं, जिससे परिणामों की शुद्धता प्रभावित हो सकती है और प्राय: ऐसा होता भी है।

(iv) कार्य-कारण संबन्धों का अभाव- नियंत्रित प्रेक्षण में अनाश्रित चर का परिचय नहीं कराया जाता। केवल परिस्थितियों को नियंत्रित करते हैं, अनाश्रित चर को हस्तादिकृत नहीं किया जाता और न ही अनाश्रित और आश्रित चरों में कार्य-कारण संबन्धों की स्थापना का प्रयास करते हैं। इसके अभाव में निश्चित रूप से यह नहीं कह सकते कि अमुक व्यवहार अमुक कारक या कारकों का ही प्रभाव है। इस प्रकार प्रकार्यात्मक (Functional) संबन्धों की स्थापना संभव नहीं है।

(v) प्रेक्षक की तटस्थता कठिन- प्रेक्षण के समय कभी-कभी प्रेक्षक स्वयं एक अनियंत्रित चर के समान हो जाता है। यदि वह तटस्थ भाव से अध्ययन करे जो अत्यन्त दुर्लभ है तो ठीक है, अन्यथा उसकी अपनी अभिवृत्तियाँ, भावनाएँ तथा विचार प्राप्त प्रदत्तों को दूषित कर देते हैं। मानव स्वभाव ऐसा है कि वह स्वयं जैसा होता है दूसरों को उसी सन्दर्भ में देखता है। रामचरितमानस में कहा गया है कि-

जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरति देखी तिन्ह तैसी।

अत: प्रेक्षक अपनी भावनाओं और अभिवृत्तियों के सन्दर्भ में ही दूसरों का प्रत्यक्षीकरण करता है। इसी प्रकार जब उन्हीं बालकों का दीर्घकाल तक प्रेक्षण किया जाता है तो प्रेक्षक के मन में बच्चों के लिए स्नेह भाव जागृत हो सकता है जो प्रेक्षण को पक्षपातपूर्ण बना सकता है। मनुष्य में अपने प्रियजनों और मित्रों के प्रति अच्छी भावना तथा शत्रुओं के प्रति दुर्भाव होते हैं। यह सब स्पष्ट करता है कि प्रेक्षण में वस्तुनिष्ठता का अभाव तथा आत्मनिष्ठता का समावेश प्राप्त प्रदत्तों की प्रमाणिकता को संदिग्ध कर सकता है।

(vi) कुछ समस्याओं का अध्ययन सम्भव नहीं- कुछ घटनाएँ ऐसी होती हैं जिनका घटित होना निश्चित नहीं होता। अत: कभी-कभी प्रेक्षक को दीर्घकाल तक उनके घटित होने की प्रतीक्षा करनी पड़ती है, फिर भी उस घटना या व्यवहार का घटित होना अनिश्चित रहता है। कभी-कभी तो व्यवहार के घटित होने के स्थान और समय की अनिश्चितता समस्या को और भी जटिल बना देती है।

साथ ही मनोविज्ञान की कुछ समस्याएँ इतनी अमूर्त होती हैं कि उनका प्रेक्षण विधि द्वारा अध्ययन दुर्लभ होता है। उदाहरण के लिए कल्पना, भाव, प्रतिमा तथा ऐसी अनेक अमूर्त समस्याएँ प्रेक्षण की परिधि में नहीं आ पातीं।

(vii) विश्वसनीयता और वैधता की समस्या- अनियंत्रित प्रेक्षण में विश्वसनीयता और वैधता के अभाव के कारण प्राप्त परिणाम भरोसे योग्य नहीं होते।

कुल मिलाकर अथवा इसके गुणों और दोषों को ध्यान में रखते हुए यह कह सकते हैं कि सतर्कतापूर्वक प्रेक्षण किया जाय तो अत्यन्त उपयोगी होगा। विकासात्मक मनोविज्ञान की विशिष्ट प्रकृति और विषय-वस्तु के कारण नियंत्रित प्रेक्षण एक महत्त्वपूर्ण अध्ययन विधि है। इसकी अनेक समस्याओं का अध्ययन प्रेक्षण द्वारा ही सम्भव है जो अन्य विधियों द्वारा नहीं हो सकता। अत: यह विकासात्मक मनोविज्ञान की एक प्रमुख विधि है।

प्रयोगात्मक विधि
(Experimental Method)

प्रयोगात्मक विधि प्राकृतिक विज्ञानों की मूल विधि है। समाज विज्ञानों में वैज्ञानिकता लाने के उद्देश्य से समाज वैज्ञानिकों ने भी इसे अपना लिया। यह मनोविज्ञान की सर्वाधिक वैज्ञानिक विधि है। इसमें उद्दीपक-अनुक्रिया (S-R) संबन्धों अथवा कारण-प्रभाव (Cause effect) संबन्धों का अध्ययन किया जाता है, अर्थात् अनाश्रित और आश्रित चरों के बीच प्रकार्यात्मक संबन्धों की परीक्षा की जाती है। व्यवहार का प्रेक्षण नियंत्रित एवं पूर्व नियोजित परिस्थितियों में करते हैं, अत: परिणाम पूर्णत: वस्तुनिष्ठ और विश्वसनीय होते हैं। पूर्णत: नियंत्रित परिस्थितियों में अनाश्रित चर में परिवर्तन करते हैं और प्रयोज्यों के व्यवहार पर उसके प्रभावों का अध्ययन करते हैं, इसमें दोनों- उद्दीपन और उनके प्रस्तुति की दशाओं को नियंत्रित करके किसी विशिष्ट प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है, नियंत्रित प्रेक्षण में केवल परिस्थितियों को नियंत्रित किया जाता है, उद्दीपन को नहीं। गैरेट (Garret) के शब्दों में, 'नियंत्रित दशाओं में प्रेक्षण ही प्रयोग है।' (Experiment is observation under controlled conditions.)

फेस्टिंजर (Festinger, 1953) के शब्दों में "प्रयोग का मूल आधार अनाश्रित परिवर्त्य में परिवर्तन से आश्रित परिवर्त्य पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन है।" (The essence of experinent may be describcd as observing the effect on a dependent variable of the manipulation of an independent variable)

आइजेंक और अन्य (Eysenck and others, 1972) के कथनानुसार, "प्रेक्षण के उद्देश्य से चरों का नियोजित परिवर्तन ही प्रयोग है, या कम-से-कम अनाश्रित या प्रायोगिक चर में पूर्व निर्धारित दशाओं में परिवर्तन ही प्रयोग है। (An experment is planned manipulation of variables for observation purposes; at least one of the variables; the independent or experimental variable is altered is altered under predetermined condition during the experiment.)

कारमाइकेल (Carmichael, 1954) के अनुसार "प्रयोग में किसी घटना को पृथक करने और नियंत्रित दशाओं में काफी बार उनकी पुनरावृत्ति करने का समवेत प्रयास, उनके संबन्धों को ज्ञात करने के लिए किया जाता है।" (Experinemt is the deliberate attempt to isolate phenomena and reproduce them frequently enough under controlled conditions in order to determine their characteristic relations, then becomes the primary and basic scientific method.)

Scanned by CamScanner

इस प्रकार उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि प्रयोग में व्यवहार का प्रेक्षण नियंत्रित परिस्थितियों में किया जाता है। परिस्थितियों और उद्दीपन, दोनों को नियंत्रित करते हैं। इस विधि में आश्रित चर (व्यवहार) पर अनाश्रित चर में परिवर्तन से पड़े हुए प्रभावों का अध्ययन किया जाता है। प्रायोगिक विधि के अन्तर्गत किसी व्यवहार को प्रभावित करने वाले अनेक कारकों में से किसी एक या कई कारकों का चयन करते हैं तथा उसके मूल्यों को परिवर्तित करके इसके प्रभावों का अध्ययन करते हैं। इस सम्पूर्ण क्रिया विशेष में सभी कारकों (अनाश्रित चर के अतिरिक्त) को नियंत्रित करते हैं। प्राय: इस विधि में प्रायोगिक तथा नियंत्रित समूह प्रयुक्त किए जाते हैं।

प्रायोगिक विधि के प्रमुख चरण निम्नलिखित हैं :

1. समस्या (Problem) - प्रयोग आरम्भ करने की पहली अनिवार्य शर्त किसी प्रश्न अथवा समस्या की उत्पत्ति है। यह एक प्रश्नवाचक वाक्य है जो दो चरों के संबन्धों को दर्शाता है कर्लिंगर, (Karlinger, 1964)। पूर्व शोधों या वर्तमान शोधों के अध्ययन, विशेषज्ञों से विमर्श, ज्ञान में न्यूनता (Gap in knowledge) तथा प्रयोगकर्त्ता के अनुभवों आदि के द्वारा समस्या उत्पन्न हो सकती है।

2. परिकल्पना (Hypothesis) - समस्या की उत्पत्ति के पश्चात् प्रयोगकर्त्ता अपनी समस्या से सम्बद्ध परिकल्पना का निर्माण करता है। इसके लिए वह सम्बद्ध साहित्य का अध्ययन करता है। टाउनसेण्ड (Townsend, 1953) के अनुसार परिकल्पना, अनुसंधान समस्या का एक प्रस्तावित उत्तर है (A hypothesis is a proposed answer of research problem) मैकगुयान (McGuigan; 1969) के अनुसार परिकल्पना दो या अधिक चरों के प्रकार्यात्मक संबन्धों का परीक्षण करने योग्य कथन है।

उपकल्पना निर्माण से प्रयोग का उद्देश्य निहित होता है और आगे की प्रक्रिया के लिए मार्ग प्रशस्त होता है। परिकल्पना की सहायता से प्रयोगकर्त्ता प्रमुख तथ्यों का चयन सुगमतापूर्वक कर सकता है। परिकल्पनाएँ कई तरह की होतीं हैं परन्तु अनेक शोधकर्त्ता शून्य परिकल्पना (Null hypothesis) का उपयोग करते हैं।

3. प्रयोज्य चयन (Selection of Subjects) - प्रयोग के तीसरे चरण में उन व्यक्तियों का चयन (प्रतिदर्श) किया जाता है जिनके ऊपर प्रयोग किया जाना है। प्रयोज्य चयन में व्यक्तियों की विभिन्न योग्यताओं तथा अन्य लक्षणों पर ध्यान देते हैं, अर्थात समान योग्यताओं और विशेषताओं वाले व्यक्तियों को ही प्रयुक्त किया जाता है।

4. प्रायोगिक अभिकल्प तथा चर (Experimental design & Variables) - चर वह लक्षण है जिसके अनेक मूल्य होते हैं कर्लिंगर (Karlinger, 1964) के अनुसार प्रयोग में एक या अधिक अनाश्रित चर होता है। इसी चर के प्रभावों का अध्ययन किया जाता है। इसका चयन, इसके मूल्यों का चयन, संख्या तथा प्रस्तुति का क्रम पूर्व व्यवस्था के अनुसार किया जाता है। अनाश्रित चर को परिभाषित करते हुए टाउनसेण्ड (Townsend. 1953) ने कहा है कि यह वह कारक है जिसे प्रयोगकर्त्ता किसी निश्चित घटना या व्यवहार से इसके संबन्धों की परीक्षा हेतु अपनी पूर्व योजना के अनुसार परिवर्तित करता है। प्रायोगिक समूह पर अनाश्रित चर को प्रशासित करते हैं जबकि नियंत्रित समूह इससे मुक्त रहता है। अन्य प्रकार का चर आश्रित चर कहलाता है। अनाश्रित चर में परिवर्तन के परिणामस्वरूप व्यक्ति (प्रयोज्य) के व्यवहार में जो परिवर्तन आता है, उसे आश्रित चर कहा जाता है। इस अनाश्रित चर के अतिरिक्त अन्य चरों को जो परिस्थिति से सम्बद्ध होते हैं, नियंत्रित किया जाता है। प्रयोग में अनाश्रित तथा आश्रित चरों में प्रकार्यात्मक अथवा कार्य-कारण (Cause-effect) संबन्धों का निर्धारण किया जाता है। इन चरों को एक उदाहरण से स्पष्ट किया जा सकता है। मान लें बच्चों के विकास में विटामिन्स की भूमिका का अन्वेषण करना है तो विटामिन्स (Vitamins) अनाश्रित चर (I.V.) एवं विकास की गति को आश्रित चर (D.V.)। बालक की अपनी विशेषताएँ- आयु, शारिरिक संरचना आदि को प्राणिगत परिवर्त्य (Organismic variables; ov) कहते हैं। प्रयोग में कुछ बाह्य तत्व भी मौजूद होंगे जिन्हें बाह्य चर (Extraneous variables) कहते हैं और उन्हें नियंत्रित कर अनाश्रित चर, (I.V.) को प्रहस्तित कर प्रयोज्य के व्यवहार या अनुक्रिया आश्रित चर, (D.V.) उसके प्रभावों का अध्ययन किया जाता है। यदि विटामिन्स की उचित मात्रा देने से विकास की गति तीव्र हो जाएगी तो कहा जाएगा कि बाल विकास की गति विटामिन्स पर निर्भर करती है (Development = Vitamins)। चरों के निर्धारण के साथ ही प्रयोगकर्त्ता प्रयोग की योजना तैयार करता है जिसे तकनीकी शब्दावली में अभिकल्प कहा जाता है। अनेक अभिकल्पों - दो यादृच्छिक समूह अभिकल्प, दो सन्तुलित समूह अभिकल्प, दो से अधिक यादृच्छिक समूह, एक प्रयोज्य समूह तथा कारक अभिकल्प में से किसी का चयन अपनी समस्या, परिकल्पना, प्रयोगशाला में उपलब्ध उपकरणों, प्रयोज्यों की उपलब्धता आदि के आधार पर करता है।

5. नियंत्रण (Controls)- प्रयोग-अभिकल्प के अन्तर्गत प्रयोगकर्त्ता यह भी सुनिश्चित करता है कि किन प्रासंगिक चरों को नियंत्रित करना आवश्यक है। अनाश्रित चर के अतिरिक्त अनेक चर भी प्रयोज्य की अनुक्रियाओं को प्रभावित कर सकते हैं। यह बाह्य या प्रासंगिक चर कहे जाते हैं। प्रयोज्यों की आयु, बुद्धि, शिक्षा, यौन, व्यक्तित्व, मानसिक योग्यताएँ, थकान, परिवेश की दशाएँ-गर्मी, सर्दी, शोर तथा प्रयोज्य का पूर्वाभ्यास आदि सभी बाह्य या प्रासंगिक चर के अन्तर्गत आते हैं। यह आवश्यक है कि अनाश्रित चर के अतिरिक्त सभी प्रासंगिक चर नियंत्रित किए जाएँ इन्हें नियंत्रित करने की अनेक तकनीकें उपयोग में लाते हैं, जैसे निरसन, दशाओं की स्थिरता, सन्तुलन, प्रतिसन्तुलन और यादृच्छिकीकरण। प्रयोगकर्त्ता बहुधा इनमें से किसी एक तथा कभी दो तकनीकों द्वारा प्रासंगिक चरों का नियंत्रण करता है। तकनीक का चयन वह अपनी समस्या तथा साधनों की उपलब्धता या अन्य साधनों की उपलब्धता या अन्य आवश्यकताओं के अनुसार करता है।

6. परिणाम विश्लेषण (Analysis of results) - अगला चरण परिणाम विश्लेषण है जिसके अन्तर्गत प्राप्त प्रदत्तों का विश्लेषण सांख्यिकीय विधियों द्वारा किया जाता

Scanned by CamScanner

है। प्रदत्तों के आधार पर मध्यमान, तथा मानक विचलन ज्ञात करते हैं। अन्तर की सार्थकता, (जो विभिन्न समूहों के निष्पादन से प्राप्त होती है) तथा यह आश्वस्त होने के लिए कि समूहों के परिणामों में अन्तर अनाश्रित चर के मूल्यों में परिवर्तन के कारण है या संयोग के कारण है, सार्थकता परीक्षण का उपयोग करते हैं। आवश्यक होने पर परिणामों का चित्रवत् वर्णन (Graphic representation of data) भी किया जाता है। फिर इन परिणामों को विश्लेषित किया जाता है।

7. व्याख्या (Intrepretation)- अन्तिम चरण के अन्तर्गत प्राप्त प्रदत्तों की व्याख्या की जाती है। सर्वप्रथम यह देखने का प्रयास किया जाता है कि परिकल्पना या परिकल्पनाएँ स्वीकृत एवं सत्यापित होती हैं या अस्वीकृत। अन्य शोध परिणामों के आधार पर प्राप्त प्रदत्तों की व्याख्या सिद्धान्तों के आधार पर करते हैं तथा व्यवहार के विषय में सामान्यीकरण किए जाते हैं। अन्त में निष्कर्षों की चर्चा की जाती है।

प्रायोगिक विधि के गुण
(Merits of Experimental Method)

प्रायोगिक विधि मनोविज्ञान की सर्वाधिक प्रचलित विधि है। दशाओं पर नियंत्रण, पुनरावृत्ति की सुविधा, सांख्यकीय जाँच आदि की सुविधाओं के कारण यह विधि सर्वोपरि है। इसके प्रमुख गुण अधोलिखित हैं :

(i) शुद्धता एवं निश्चितता (Accuracy-Precision) - मनोविज्ञान की अन्य सभी विधियों की अपेक्षा इसमें अधिक शुद्धता, संक्षिप्तता और निश्चितता पाई जाती है। व्यवहार पर प्रभाव डालने वाले प्रसंगिक चरों को नियंत्रण में रखने तथा उपयुक्त प्रायोगिक अभिकल्प के अनुप्रयोग के कारण यह विधि सर्वोत्तम मानी जाती है।

(ii) कार्य-कारण संबन्धों की स्थापना (Cause-effect) - इस विधि की सबसे प्रमुख विशेषता जो अन्य विधियों में उपलब्ध नहीं है, कार्य-कारण संबन्धों की स्थापना है। प्रेक्षण की विधि में अनेक गुणों के होते हुए भी केवल इस गुण का अभाव उसे प्रयोग की अपेक्षा कम उपयोगी एवं कम महत्त्वपूर्ण बना देता है।

(iii) परिकल्पना परीक्षण (Hypothesis testing) - यह परिकल्पना की जाँच के दृष्टिकोण से भी मनोवैज्ञानिक विधियों में सर्वश्रेष्ठ है। इसमें प्राय: दो यादृच्छिक समूह अभिकल्प के उपयोग के कारण परिकल्पना की परीक्षा सर्वोत्तम रूप में होती है। सम्प्रति में प्रयोग में अनेक परिकल्पनाओं की जाँच एक ही अध्ययन में संभव हो गई है।

(iv) दशाओं का निर्माण (Creating conditions) - इस विधि में प्रयोगकर्ता अपनी आवश्यकतानुसार दशाओं का निर्माण कर सकता है। यह इस विधि की अद्वितीय

(i) Elimination, Constancy of Conditions, Balancing, Counter - balancing and Randomization.

विशेषता है। ऐसा इसलिए हो पाता है कि प्रासंगिक चरों को नियंत्रित कर अनाश्रित चर के मूल्यों में परिवर्तन लाता है। किसी समस्या के अध्ययन के लिए इसके पूर्व उसे आदर्श दशा या परिस्थिति का निर्माण करना होगा। इसके अन्तर्गत वह अपनी बुद्धि, कल्पना, चिन्तन आदि की सहायता से प्रायोगिक दशाएँ उत्पन्न करने का प्रयास करेगा। प्रायोगिक परिस्थिति पूर्ण रूप में नियंत्रित की जाती है जिससे कि अनाश्रित परिवर्त्य में संबन्धों की स्थापना हो सके। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए नियंत्रित और प्रयोगिक समूह चुने जाते हैं। अनाश्रित परिवर्त्य के अतिरिक्त अन्य चरों को नियंत्रित करते हैं। फिर सभी समूहों को समतुल्य रखते हैं और प्रायोगिक समूह में अनाश्रित परिवर्त्य को प्रहस्तित करके प्रस्तुत करते हैं। यह सब केवल प्रयोग-विधि में ही संभव है।

(v) सर्वाधिक वैज्ञानिक विधि- अपनी वस्तुनिष्ठता, शुद्धता, संक्षिप्तता, पुनरावृत्ति और विश्वसनीयता के कारण यह सबसे अधिक वैज्ञानिक विधि है। इस विधि के उपयोग के चलते मनोविज्ञान को विज्ञानों की पंक्ति में स्थान प्राप्त हुआ है। अत: यह मनोविज्ञान की सर्वाधिक वैज्ञानिक और सर्वश्रेष्ठ विधि है।

दोष (Demerits)

प्रायोगिक विधि नि:सन्देह मनोविज्ञान की सबसे अधिक वैज्ञानिक विधि है, किन्तु व्यवहारिक स्तर पर इसके अनुप्रयोग में कुछ कठिनाइयाँ भी आती हैं। प्रमुख कठिनाइयाँ इस प्रकार हैं :

(i) परिवेश की कृत्रिमता- प्रयोग में प्रयुक्त अनेक प्रकार के नियंत्रण प्रयोगशाला के परिवेश को किसी मात्रा में कृत्रिम बना देते हैं। कृत्रिम परिवेश में प्राकृतिक व्यवहार के घटित होने की अपेक्षा नहीं की जा सकती। अत: प्राप्त प्रदत्तों के दूषित होने की सम्भावना बराबर बनी रहती है। व्यवहार के कृत्रिम से वास्तविक व्यवहार के घटित होने होने की संभावना घट जाती है।

(ii) सभी कारकों का नियंत्रण दुर्लभ- किसी व्यवहार को प्रभावित करने वाले सभी कारकों का नियंत्रण अव्यवहारिक और असम्भव है। लाख प्रयास किए जाएँ, व्यवहार की विविधता और जटिलता के कारण सभी बाह्य या प्रासंगिक चर नियंत्रित नहीं हो पाते। अत: यह सुनिश्चित करना कि व्यवहार विशेष अनाश्रित चर के कारण उत्पन्न हुआ या किसी अन्य कारणों से उत्पन्न हुआ, बहुत कठिन है। यह इस विधि में निहित एक गम्भीर कठिनाई है।

(iii) उपयुक्त प्रयोज्य चयन में कठिनाई- प्रयोग के लिए उपयुक्त प्रयोज्य चयन भी एक अत्यन्त जटिल कार्य है। प्रतिदर्श सम्पूर्ण जनसंख्या का वास्तविक प्रतिनिधि होना चाहिए। इस कठिनाई को दूर करने के लिए अनेक सूक्ष्म तकनीकें विकसित हुई हैं। किन्तु विकासात्मक मनोविज्ञान में शिशुओं और छोटे बालकों पर प्रयोग करने में फिर भी अनेक कठिनाइयाँ आती हैं, जिससे प्रयोग विधि का महत्त्व कम हो जाता है।

Scanned by CamScanner

(iv) बाह्य वैधता विषयक न्यूनता- प्रयोगशाला की नियंत्रित परिस्थितियों में सम्पादित एवं संचालित प्रयोग वास्तविक जीवन और प्राकृतिक घटनाओं से दूर हो सकते हैं। ऐसी दशा में उनकी वैधता पर प्रश्न चिन्ह लग सकते हैं।

(v) कुछ दशाएँ प्रयोगशाला में उत्पन्न नहीं हो सकतीं- अनेक व्यवहार घटनाएँ तथा दशाएँ ऐसी हैं जिन्हें प्रयोगशाला में उत्पन्न करना सम्भव नहीं है- जैसे भीड़, दर्शक या श्रोता समूह, युद्ध क्रान्ति, आन्दोलन, साम्प्रदायिक तनाव, दंगे आदि। अतः मनोवैज्ञानिक इनके अध्ययन के लिए अन्य विधियों पर निर्भर करते हैं।

रिपोर्ट्स तथा प्रश्नावली (Reports & Questionnaires)

रिपोर्ट्स प्रश्नावली तथा परिसूची के उपयोग में यह मान्यता निहित होती है कि व्यक्ति उन तथ्यों का विवरण अंकित कर रहा है जो वह पहले से जानता है, या अनुभव करता है।

रिपोर्ट्स के अन्तर्गत सभी प्रकार के तथ्यात्मक कथन आते हैं जिन्हें परीक्षार्थी जानने की स्थिति में होता है। वह इन्हें अपने प्रेक्षण, पूर्व ज्ञान उपलब्ध आकृतियों, चित्रों परीक्षण परिणामों आदि के आधार पर जानता है। वैज्ञानिक उद्देश्यों के लिए यह जानना आवश्यक है कि तथ्य शुद्ध है या नहीं। अतः अध्ययनकर्त्ता परिणामों का सत्यापन करते हैं।

प्रश्नावली में किसी विषय या शीर्षक से सम्बद्ध अनेक प्रश्न व्यवस्थित एवं समूहीकृत क्रम में प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार प्रश्नावली किसी विषय से सम्बद्ध उद्देश्यपूर्ण, सुनियोजित एवं क्रमबद्ध सूची है। प्रश्नावलियाँ दो प्रकार की होती हैं- (i) वह जो अन्य तथ्यों को जानने पर बल देती हैं, जो परीक्षार्थी को ज्ञात होते हैं, और (ii) वे जो विशिष्ट परिस्थिति, व्यवहार प्रणाली, व्यक्ति विशेषताओं, नीति संबन्धी मामले, प्रशिक्षण आदि के विषय में मत ज्ञात करने के लिए बनाई जाती हैं। इन्हें क्रमशः ज्ञात तथ्यों का बोध कराने वाली प्रश्नावली (Facts seeking questionnaire) तथा मत निश्चित करने वाली प्रश्नावली (Opinion seeking questionnaire) कहते हैं। प्रश्नावली का यह भेद कारमाइकेल (Carmichael, 1954) ने बताया है।

इस प्रकार की प्रश्नावली में अनेक प्रश्नों के उत्तर, परीक्षार्थी अपने तथ्यों के आधार पर देते हैं। उदाहरण के लिए

(i) मुझे रात्रि में डरावने स्वप्न दिखाई देते हैं। हाँ / नहीं

(ii) अपरिचित व्यक्तियों से बातचीत करना पसन्द नहीं है। हाँ / नहीं

(iii) सामाजिक अवसरों पर आगे रहो। हाँ / नहीं

दूसरे प्रकार की प्रश्नावली द्वारा मत निर्धारण किया जाता है, जैसे परिवार का छोटा होना अच्छा है.....मत प्रकट करें! शिक्षा-प्रणाली में आमूलचूल परिवर्तन आवश्यक है..... मत व्यक्त करें।

प्रश्नावली का निर्माण करते समय निम्न बातों पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है:

(i) प्रश्नों की भाषा सरल और बोधगम्य हो।

(ii) प्रश्न स्पष्ट, तथ्यात्मक और छोटे हों।

(iii) प्रश्न की सूची बहुत विस्तृत या लम्बी न हो।

(iv) प्रश्न सरल से आरम्भ होकर धीरे-धीरे या क्रमशः कठिन हों।

(v) प्रश्न (रुचिकर हों, उबाने वाले न हों।

(vi) कठिन शब्दों का स्पष्टीकरण किया जाय।

(vii) द्वय अर्थक प्रश्नों को प्रश्नावली में न रखें।

विकासात्मक अध्ययनों में प्रश्नावली विधि का उपयोग अनेक मनोवैज्ञानिकों ने किया है। (Stanley Hall, 1891, and Boston) हॉल, वार्निस तथा अन्य ने इसका उपयोग बच्चों की स्वचेतना (Sense of self), बाल संग्रह (collection), बाल-भय (children's fear), खिलौनों, स्वप्नों तथा क्रीड़ा सामग्रियों के प्रति उनकी प्रतिक्रियाओं आदि के विषय में किया था।

प्रश्नावली के प्रकार (Types of Questionnaire)

1. अप्रतिबन्धित प्रश्नावली (Open Questionnaire)- ऐसी प्रश्नावली में सूचना-दाता बिना किसी प्रतिबन्ध के स्वतंत्र होकर मनचाही सूचनाएँ दे सकता है। उत्तर मात्र हाँ-नहीं में न देकर जितना विस्तृत भी चाहें दे सकते हैं और जिस प्रकार की सूचनाएँ चाहें दे सकते हैं, जैसे:

(i) आपके स्कूल-पुस्तकालय में क्या न्यूनताएँ हैं?

(ii) आपके विद्यालय में क्या सुधार आवश्यक है?

(iii) देश की आर्थिक नीति में क्या सीमाएँ हैं?

2. प्रतिबन्धित प्रश्नावली (Closed Questionnaire)- इसमें परीक्षार्थी के प्रत्युत्तर प्रतिबन्धित होते हैं। प्रत्येक प्रश्न के समक्ष प्रदत्त संक्षिप्त उत्तरों में से अपनी अनुक्रिया का चयन परीक्षार्थी करते हैं। प्रत्येक प्रश्न के समक्ष प्रदत्त संक्षिप्त उत्तरों में से अपनी अनुक्रिया का चयन परीक्षार्थी करते हैं, जैसे:

(i) इनमें कौन देश सबसे अच्छा है। भारत, अमेरिका, चीन, इंग्लैण्ड

(ii) किंससे भय लगता है। अंधकार, सर्प, पिता, शिक्षक

(iii) कौन धर्म सबसे अच्छा है। हिन्दू, इस्लाम, ईसाई, सिक्ख

3. चित्र प्रश्नावली (Pictorial Questionnaire)- विशेषकर छोटे बालकों और कुछ दशाओं में बड़े बालकों के अध्ययन में उपयोगी है। प्रश्नवाचक रूप में न करके,

Scanned by CamScanner

इस प्रकार की प्रश्नावली में चित्रों के माध्यम से किए जाते हैं। अनेक प्रकार के परीक्षणों तथा परिसूचियों को कुशलतापूर्वक चित्रवत रूप में प्रस्तुत किया जाता है। क्रमानुसार अनेक चित्रों द्वारा मानव संबन्धों को दर्शाया जाता है। उदाहरण के लिए प्रजातीय संबन्ध, सामाजिक चेतना आदि। यह अध्ययन रैडकी (Radke, 1949), गेट्स (Gates, 1923), मर्फी (Murphy, 1937) आदि ने किए हैं।

प्रश्नावली में सुविधाएँ (Advantages)

प्रश्नावली विधि में प्रमुख सुविधाएँ निम्नलिखित हैं:

(i) कम समय तथा कम खर्च में पर्याप्त सूचनाएँ उपलब्ध हो जाती हैं।

(ii) यह विधि सरल और सहज होती है। इसका उपयोग आसान है।

(iii) यदि प्रश्नावली सावधानीपूर्वक बनाई जाए तो पर्याप्त निष्पक्ष और शुद्ध परिणाम प्राप्त होते हैं।

(iv) प्रश्नावली डाक द्वारा भेजकर वांछित अनुक्रिया प्राप्त करना सम्भव है जो अन्य विधियों में संभव नहीं है।

(v) प्रश्नावली द्वारा प्राप्त प्रदत्तों का सांख्यिकीय विश्लेषण सम्भव है।

सीमाएँ (Limitations)

1. प्राय: उत्तरदाता अपनी वास्तविक भावनाओं एवं तथ्यों को छिपाकर गलत उत्तर देते हैं। ऐसी दशा में अशुद्ध परिणाम प्राप्त होते हैं और कोई ऐसा उपाय नहीं है जिससे यह सत्यापित हो सके कि परीक्षार्थी प्रश्नों का उत्तर सही या गलत दे रहा है।
2. इसका उपयोग साधारण जनसंख्या पर सम्भव नहीं है। यह केवल शिक्षित व्यक्तियों पर ही प्रशासित की जाती है।
3. बहुधा परीक्षार्थी को प्रश्नावली में पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देने के लिए प्रेरित करना कठिन है।
4. अनिच्छुक व्यक्तियों को प्रश्नावली में पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देने के लिए प्रेरित करना कठिन है।
5. प्रश्नावली के उत्तरों में औपचारिकता, अवैयक्तिकता और यांत्रिकता होती है।
6. अनेक निजी घटनाओं, व्यवहारों या निजी तथ्यों का उत्तर देना व्यक्तियों को उचित नहीं प्रतीत होता। ऐसी दशा में वे या तो अशुद्ध उत्तर देते हैं या उन प्रश्नों के उत्तर एक सिरे से देते ही नहीं।

उपर्युक्त न्यूनताओं के बाद भी अपने विशेष गुणों के कारण यह एक लोकप्रिय विधि है।

4. साक्षात्कार विधि (The Interview Method) - इस विधि में साक्षात्कारकर्त्ता

तथा उत्तरदाता आमने-सामने (Face to face) संबन्धों में किसी विशिष्ट समस्या पर उद्देश्यपूर्ण वार्तालाप करते हैं। यह बातचीत मौखिक या लिखित होती है। इस प्रकार साक्षात्कार के अन्तर्गत दो व्यक्तियों की अन्तर्क्रिया के द्वारा महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ प्राप्त की जाती हैं। सामाजिक विज्ञानों में इस विधि का काफी प्रचलन है। साक्षात्कार मुख्य रूप से दो प्रकार का होता है :

(i) संरचित साक्षात्कार (Structured Interview) - इस विधि में सर्वप्रथम साक्षात्कार अनुसूची में उत्तरदाता के विषय में समान्य सूचनाएँ- नाम, पता आदि के विषय में प्रश्न होते हैं। शेष प्रश्न समस्या या अध्ययन विषय से सम्बद्ध होते हैं। यह प्रश्न पहले से तैयार किए जाते हैं और निश्चित क्रम के अनुसार पूछे जाते हैं। प्रत्येक उत्तरदाता से ठीक वही प्रश्न किए जाते हैं। प्रश्नों का स्वरूप, क्रम और संख्या में कोई परिवर्तन करने की अनुमति नहीं होती। कोई मौखिक प्रश्न नहीं किए जाते, सभी प्रश्न सूची में मुद्रित होते हैं, जिन्हें उत्तरदाता एक-एक करके पढ़ते तथा उत्तर देते हैं। किसी वांछित प्रश्न के छूट जाने या अवांछित प्रश्न के पूछने की कोई सम्भावना नहीं होती। अत: यह विधि काफी प्रमाणिक होती है। प्राप्त उत्तरों के विश्लेषण द्वारा निष्कर्ष प्राप्त किए जाते हैं।

(ii) असंरचित साक्षात्कार (Unstructured Interview) - इसे मुक्त (Open-end) साक्षात्कार भी कहा जाता है। हाल के वर्षों में इसका काफी प्रचलन हुआ है। इसमें समस्या के विषय में पहले से प्रश्न नहीं बनाए जाते, न तो प्रश्नों का स्वरूप और संख्या ही पूर्वनिश्चित होती है। अध्ययन करने वाले कोई भी प्रश्न करने के लिए स्वतंत्र होते हैं। अप्रतिबंधित रूप से प्रश्न करने के कारण यह अन्य विधियों से सर्वथा भिन्न है। इसमें प्रतिबंध न होने से जहाँ प्रश्नों में प्रतिबंध का अभाव अध्ययनकर्त्ता को मुक्त भाव से किए प्रश्नों द्वारा व्यक्तियों को भली प्रकार समझने का अवसर उपलब्ध होता है। किसी अध्ययन के आरम्भिक स्तरों पर असंरचित तथा आगे के चरणों में संरचित साक्षात्कार महत्त्वपूर्ण होता है।

साक्षात्कार विधि के गुण

इस विधि के प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं :

(i) साक्षात्कारकर्त्ता और उत्तरदाता में आमने-सामने के संबन्धों (Face to face relations) के कारण मुखाकृति, प्रकाशनों तथा अन्य व्यवहारों से अनेक प्रमुख सूचनाएँ प्राप्त होती हैं। साथ ही उत्तरों के सत्यापन एवं पुष्टि का अवसर मिलता है। प्रत्यक्ष संबन्ध अनेक कारणों से अतिरिक्त तथ्य प्रदान करने में सहायक होता है।

(ii) असंरचित साक्षात्कार द्वारा अशिक्षितों का अध्ययन भी सम्भव है। इसमें लचीलापन होता है, अर्थात अध्ययनकर्त्ता उत्तरदाता की मनोदशा तथा परिस्थिति को देखते हुए प्रश्नों में फेर-बदल कर सकता है।

(iii) साक्षात्कार का कार्य प्राय: विशेषज्ञों द्वारा किया जाता है। अत: परिणामों के विश्वसनीय होने की सम्भावना होती है।

Scanned by CamScanner

(iv) संरचित साक्षात्कार विशेष रूप से अधिक वैज्ञानिक होता है क्योंकि इसमें पूर्व से के अनुसार प्रश्नों का स्वरूप, संख्या और क्रम निश्चित किया जाता है।

साक्षात्कार विधि की सीमाएँ (Limitations of Interview Method)

इस विधि की कुछ प्रमुख सीमाएँ निम्नलिखित हैं:

(i) साक्षात्कार द्वारा व्यक्तियों के निजी जीवन के विषय में बहुत कम सूचनाएँ प्राप्त हैं। अनेक आवश्यक तथ्यों के छिपाये जाने की प्रबल सम्भावना होती है।

(ii) उत्तरदाता इस बात से अवगत होता है कि साक्षात्कार द्वारा उसका अध्ययन हो रहा अत: उसमें आत्मचेतना (Self consciousness) उत्पन्न हो जाती है। ऐसी परिस्थिति में प्राप्त प्रदत्तों पर भरोसा करना कठिन होता है।

(iii) अनेक व्यक्ति साक्षात्कार के लिए तत्पर नहीं होते। वे समयाभाव या कुछ अन्य से अपनी विवशता व्यक्त करते हैं।

(iv) साक्षात्कारकर्त्ता का विशेषज्ञ होना अनिवार्य है। यदि विशेषज्ञों द्वारा साक्षात्कार लिया है तो प्रदत्तों पर विश्वास किया जा सकता है।

(v) विशेषज्ञों द्वारा साक्षात्कार लिए जाने पर एक समय में एक ही व्यक्ति का साक्षात्कार है। अत: यदि सौ-दो-सौ या अधिक लोगों का साक्षात्कार होना है तो इस विधि में धन और समय लगता है।

(vi) वैयक्तिक केस विधि (The individual case method) - वैयक्तिक केस विधि को सामान्यीकरण के साधन के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है, क्योंकि इसके द्वारा वैज्ञानिक सूचना प्राप्त करना सम्भव है। मनोविश्लेषण, निदान असामान्य तथा विकासात्मक क्षेत्रों में वैयक्तिक बालकों के अध्ययनों द्वारा काफी सामग्री प्राप्त होती है। बहुधा प्रेक्षणों और व्याख्याओं का सारांश प्रस्तुत किया जाता है। जब अध्ययनकर्त्ता किसी विकासात्मक प्रक्रिया को विस्तार में जानने की इच्छा रखता है, तो प्राय: वैयक्तिक विधि का चयन करता है। किन्तु इसका बहुत कम उपयोग होता है क्योंकि इसमें अत्यधिक समय और धन का व्यय होता है। केस अध्ययन विधि द्वारा अध्ययन में अनुदैर्घ्य (Longitudinal) उपागम के अनुसार एक व्यक्ति का दीर्घकाल तक गहन अध्ययन किया जाता है। दीर्घकाल तक एक व्यक्ति के विकास की प्रगति का अनुसरण करने के कारण अध्ययनकर्त्ता को विकास-प्रक्रिया का स्पष्ट, संक्षिप्त और निश्चित स्वरूप प्राप्त होता है। विकासात्मक प्रक्रिया पर पड़ने वाले प्रभावों का भी बोध इस विधि द्वारा प्राप्त होता है।

विकास-अभिलेखों का विश्लेषण एक काफी जटिल कार्य है जिसके लिए अनुभवी और प्रशिक्षित निर्णायकों की आवश्यकता होती है। बहुधा अनुभवी निर्णायकों के विचारों में भी संगति एवं एकरूपता के अभाव का बोध होता है। एल्किन (Elkin, 1947) ने व्याख्याओं

में प्राप्त भिन्नताओं की चर्चा अपने एक शोध पत्र में की है। उसने एक अपराधी बालक के जीवन का विस्तृत वृत्तान्त 78 ऐसे विशेषज्ञों के समक्ष प्रस्तुत किया जो विभिन्न क्षेत्रों से चुने गए थे। विशेषज्ञों द्वारा प्रकट मत एवं व्याख्या में नगण्य मतैक्य (Consensus) प्राप्त हुआ।

कुछ दशाओं में इस विधि द्वारा उत्साहवर्द्धक परिणाम प्राप्त हुए हैं (Neilon, 1948, Zulin, 1933, Chapman, 1935, 1936 and Levene, 1949)

इस विधि की सबसे गम्भीर असुविधा यह है कि केवल एक व्यक्ति के दीर्घकालिक अध्ययन के आधार पर सामान्यीकरण की वैधता की परीक्षा की जाती है। अत: अध्ययन की वैधता संदिग्ध होती है। एक अन्य न्यूनता यह है कि दीर्घकाल तक साथ रहने के कारण अध्ययनकर्त्ता बहुधा अपने प्रयोज्य से सांवेगिक लगाव का अनुभव करने लगता है। ऐसी दशा में तटस्थ होकर अध्ययन करना दुष्कर हो जाता है।

कारमाइकेल (Carmichael, 1954) ने वैयक्तिक केस अध्ययन के अनेक प्रकारों की चर्चा की है- केस इतिहास, संचयी अभिलेख, नैदानिक अध्ययन, असाधारण बच्चों के व्यक्तित्व, तथा मनोविश्लेषक व्यक्तित्व अध्ययन।

(i) व्यक्ति इतिहास विधि (Case history method) - इस विधि द्वारा अध्ययन करने के लिए किसी बालक, किशोर, प्रौढ़, आदि के विषय में विभिन्न साधनों से तथ्यों का संग्रह किया जाता है। सूचना प्राप्ति अथवा तथ्य संग्रह के इन साधनों के अन्तर्गत आधिकारिक अभिलेख, स्वयं व्यक्ति की कथा, सम्बन्धियों द्वारा प्रस्तुत विवरण, परीक्षाओं और साक्षात्कार (यदि कोई हों) के परिणाम, माता-पिता, मित्रों अध्यापकों आदि से प्राप्त विवरण के आधार पर तथ्य एकत्रित किए जाते हैं। यद्यपि यह इतिहास व्यवहारिक महत्त्व रखते हैं। विशेषकर निर्देशन (Guidance) कार्यों में इनका मूल्य है। किन्तु इनका मूल्य सीमित है, क्योंकि यह प्रदत्त अन्य व्यक्तियों के सन्दर्भ से एकत्रित किए जाते हैं। फाइल में जो कुछ होता है वह प्राय: व्यवस्थित रूप से अभिलेख तैयार करने के कारण नहीं वरन् केस कार्यकर्त्ता की रुचि और मनोदशा पर निर्भर करता है।

(ii) संचीय अभिलेख (Cumulative record) - आज विभिन्न संस्थाएँ अनेक अवसरों पर मापन और प्रेक्षणों का संचयी अभिलेख रखती हैं। वह व्यक्ति इतिहास विधि से श्रेष्ठ है, क्योंकि यह अधिक पूर्ण होता है और व्याख्या की त्रुटियों से वंचित है। स्कूल के अभिलेख इसका एक प्रमुख साधन हैं। इसके द्वारा विकास प्रक्रिया की थोड़े समय में जो जानकारी मिलती है किसी अन्य तकनीक द्वारा इतने अल्प समय में नहीं मिलती। इस तकनीक के उपयोग का सबसे अच्छा उदाहरण बेलर (Baller, 1936) और ग्लूएक तथा ग्लूएक (Glueck and Glueck, 1934) के अध्ययनों से प्राप्त होता है। अध्ययन के समापन के बाद पृष्ठगामी (Follo up) अध्ययनों का होना आवश्यक है, अन्यथा अशुद्ध निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।

(iii) नैदानिक अध्ययन (Clinical Studies) - यह तकनीक असामान्य,

Scanned by CamScanner

कुसमायोजित एवं विकृत व्यक्तियों के अध्ययन में विशेष रूप से उपयोगी मानी जाती है। यह एक प्राचीन विधि है। इसके अन्तर्गत मानसिक रोगियों के लक्षणों से अभिलेख तैयार किए जाते हैं। नैदानिक प्रदत्त किसी विशिष्ट असामान्यता के विषय में टिप्पणी के रूप में होते हैं। प्राय: इनकी पूर्ति अन्य वस्तुनिष्ठ प्रदत्तों द्वारा करते हैं।

(iv) असाधारण बालकों का व्यक्तित्व अध्ययन (Personality studies of unusual children in the literature) – प्राय: ऐसे बालकों की ओर ध्यान दिया जाता है जो अपनी क्षमताओं के अनुसार असाधारण होते हैं। कभी-कभी उसी समय व्याख्यात्मक अध्ययन आरम्भ किए जाते हैं और चालू विकासात्मक अभिलेख प्राप्त किए जाते हैं। वूल्ली (Woolley, 1925, 1926) ने ऐसे असाधारण योग्यता वाले या प्रतिभावान बालको का वर्णनात्मक अध्ययन किया था।

(v) मनोविश्लेषणात्मक व्यक्तित्व अध्ययन (Psychoanalytic Personality Studies) – इस विधि द्वारा अध्ययन का आधार मनोविश्लेषणवादी धारणा है जिसका अध्ययनकर्त्ता सर्वप्रथम प्रयोज्यों से सौहार्दपूर्ण संबन्ध स्थापित करता है, तब अन्तर्निहित स्मृतियों को पुन: मानस पटल पर लाने या पुन: सजीव करने के लिए प्रोत्साहित करता है। फिर वह भावना ग्रंथियों और द्वन्द्वों की उत्पत्ति के विषय में सूचना प्राप्त करता है। इस प्रक्रिया द्वारा वह रोगियों को पुनर्शिक्षित करता है ताकि वह अपना सन्तुलन पुन: प्राप्त कर सके। इस विधि का मूल उद्देश्य उपचारात्मक है। रोगी की मूल प्रवृत्तियों, प्रणोदनों और समाज के बीच सन्तुलन स्थापित होने से रोग के लक्षण समाप्त होने लगते हैं।

अन्ना फ्रायड (Anna Freud, 1925) तथा क्लाइन (Klien, 1932) ने इस विधि का उद्धरण अपनी पुस्तक में दिया है। इस विधि में उच्च स्तर की विश्वसनीयता या वैधता नहीं होती, अत: इसका उपयोग सीमित है।

6. परीक्षण विधि (Testing Method) – परीक्षण विधि मनोवैज्ञानिक विशेषताओं के मापन की अद्वितीय विधि है। मनोवैज्ञानिक विशेषताओं में व्यक्तिगत भिन्नता पाई जाती है। इन भिन्नताओं का मापन परीक्षणों के द्वारा किया जाता है। बेस्ट (John W. Best; 1963) के अनुसार मनोवैज्ञानिक परीक्षण एक ऐसा उपकरण है जिसे मानव व्यवहार के किसी पक्ष के मापन एवं वर्णन के लिए बनाया जाता है (A psychological test is an instrunent designed to describe and measure a sampie of certain aspects of human behavior)। बालक के विभिन्न प्रकार की योग्यताओं, क्षमताओं, कुशलताओं तथा विशेषताओं का मापन परीक्षण विधि द्वारा किया जाता है। व्यक्तित्व लक्षणों का मापन भी इन परीक्षणों द्वारा किया जाता है। मनोवैज्ञानिक परीक्षण वस्तुनिष्ठ, प्रमाणिक, विश्वसनीय एवं वैध उपकरण हैं। परीक्षणों में मानक भी उपलब्ध होते हैं जिनके आधार पर दो बालकों की योग्यता और क्षमताओं के विकास का तुलनात्मक अध्ययन सम्भव है।

मनोवैज्ञानिक परीक्षण अनेक प्रकार के होते हैं, जिनसे विभिन्न प्रकार की योग्यताओं और क्षमताओं का मापन किया जाता है। बुद्धि परीक्षण, विशेष अभिक्षमता परीक्षण, उपलब्धि

परीक्षण, रुचि परीक्षण, व्यक्तित्व परीक्षण आदि अनेक प्रकार के होते हैं। प्रशासन की सुविधा के अनुसार परीक्षण व्यक्तिगत तथा सामूहिक- दो वर्गों में बाँटे जाते हैं। माध्यम की दृष्टि से परीक्षण शाब्दिक तथा क्रियात्मक होते हैं। कुछ परीक्षण गति परीक्षण की कोटि में तो अन्य शक्ति परीक्षण के वर्ग में आते हैं।

वैज्ञानिक परीक्षण मनोविज्ञान की अन्य शाखाओं की भाँति विकासात्मक मनोविज्ञान में भी महत्त्वपूर्ण है। विभिन्न योग्यताओं, क्षमताओं और विकासात्मक लक्षणों के मापन में परीक्षण विधि विशेष उपयोगी पाई गई है। इस विधि का उपयोग बढ़ता ही जा रहा है। वैयक्तिक भिन्नताओं, समूहों के अध्ययन, मानसिक योग्यताओं के विकास की सीमाओं के निर्धारण तथा तुलनात्मक अध्ययनों में इस विधि का उपयोग उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है। थोड़े समय में अधिक व्यक्तियों का अध्ययन इस विधि की एक अनुपम विशेषता है। यह एक शुद्ध, विश्वसनीय, वैध, वस्तुनिष्ठ और प्रामाणिक विधि है।

उपर्युक्त विवरण से विदित होता है कि मनोवैज्ञानिक परीक्षण के अनेक लाभ हैं। इनमें कुछ निम्न हैं:-

(i) इसके फलस्वरूप मानसिक एवं अन्य विशेष योग्यताओं के मापन के लिए अनेक पूर्वनिर्मित उपकरण (परीक्षण) उपलब्ध हैं।

(ii) एक साथ पूरे समूहों में वैयक्तिक भिन्नताओं का अध्ययन संभव हो गया है।

(iii) इनसे शुद्ध परिणाम प्राप्त होते हैं जिन पर परीक्षक का कोई प्रभाव नहीं होता।

(iv) प्राप्त परिणाम वस्तुनिष्ठ, मात्रात्मक और तुलनात्मक होते हैं।

इस विधि में कुछ न्यूनताएँ भी देखी जाती हैं। परीक्षणों द्वारा व्यवहार के कुछ पक्षों का अध्ययन नहीं हो पाता है। यही नहीं व्यवहार के जिस लक्षण के मापन हेतु परीक्षण बनाए जाते हैं, उनका उपयुक्त मापन करने में बहुधा असफल रहते हैं। कुछ परीक्षणों की गणना की प्रणाली जटिल होती है। अनेक व्यक्ति भाषा संबन्धी समस्याओं के कारण इन परीक्षणों का उपयोग नहीं कर पाते।

बाल विकास के अध्ययन उपागम (Approaches of Human Development)

विकासात्मक मनोविज्ञान के दो मुख्य उपागम हैं जो अनुदैर्ध्य उपागम (Longitidinal approach) तथा प्रतिनिध्यात्मक उपागम (Cross sectional approach) कहे जाते हैं। अनुदैर्ध्य उपागम के द्वारा अध्ययन करने वाले विकासात्मक मनोवैज्ञानिक थोड़े बालकों का प्रतिदर्श (Sample) लेकर प्रत्येक बालक का अलग-अलग अध्ययन विकास की विभिन्न अवस्थाओं में करते हैं। वे जिन बालकों का चयन करते हैं उनका लम्बे समय अर्थात् कई वर्षों तक अध्ययन कई अवस्थाओं जैसे शैशवावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था आदि में करते हैं। वे उसी बालक या बालिका के विकास के स्वरूप, गति, शारीरिक एवं मानसिक

विशेषताओं का अध्ययन निरन्तर करते हैं। वे उसके (उनके) व्यवहार के परिवर्तनों का दीर्घकाल तक प्रेक्षण करते हैं। दूसरी ओर प्रतिनिध्यात्मक उपागम के अन्तर्गत विभिन्न आयु समूहों के बालकों को प्रतिदर्श में चयनित कर किसी विशेष क्षमता, योग्यता या विकास का अध्ययन करते हैं। इस उपागम द्वारा सीमित समय में विकास की कई अवस्थाओं की व्यवहार संबन्धी विशेषताओं का अध्ययन उस आयु विशेष के प्रतिनिधि प्रतिदर्श पर किया जाता है। इस उपागम में उस अवस्था विशेष के उस विकास के मानक भी विकसित किए जाते हैं।

यह उपागम प्रेक्षण और प्रयोग की विधियों में विशेष रूप से प्रयुक्त होते हैं, वैसे इनका उपयोग कम या अधिक अनेक विधियों में होता है।

अनुदैर्घ्य उपागम (Longitudinal approach)

यह विकासात्मक मनोविज्ञान का अनूठा उपागम है। इसके अन्तर्गत उसी व्यक्ति या समूह का अध्ययन विकास की विभिन्न अवस्थाओं में करते हैं। अनुदैर्घ्य अध्ययनों में उन्हीं बच्चों का अध्ययन क्रमिक अवधियों में किया जाता है। (Freeman, 1937; Dearborn and Rothney; 1941) हरलॉक (1978) के अनुसार 'बाल-विकास के अध्ययन के अनुदैर्घ्य उपागम के अन्तर्गत बाल्यावस्था से लेकर किशोरावस्था तक अनेक मध्यान्तरों में उन्हीं बालकों की पुनर्परीक्षा करते हैं।' (The longitudinal approach of studying child development consists of re-examining the same children at intervals throughout the childhood to adolescent years. Hurlock, 1978)। जुबेक तथा सोलबर्ग (Zubeck & Solberg; 1954) के अनुसार "अनुदैर्घ्य उपागम में उन्हीं प्रयोज्यों के विकासों या प्रगतियों के, वर्षवार परिवर्तनों को अंकित किया जाता है (Longitudinal studies _____ follow the progress of the same subjects from year to year noting changes as they occur.) इस प्रकार इस उपागम में उन्हीं बालकों में विकास का वर्षवार अध्ययन करते हैं। इससे विकास का सही चित्र प्राप्त होता है। इससे अन्तर वैयक्तिक विचलनशीलता (Inter individual variability) तथा अन्तर्वैयक्तिक विचलनशीलता (Intra individual variability) दोनों का अध्ययन सम्भव है। इस उपागम द्वारा प्राप्त प्रदत्तों को मात्रात्मक रूप में व्यक्त किया जा सकता है। इससे यह भी ज्ञात होता है कि वैकासिक परिवर्तन कैसे और क्यों उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार विकास के निर्धारकों का बोध अनुदैर्घ्य उपागम द्वारा होता है। इसके द्वारा विकास की प्रत्येक अवस्था तथा प्रत्येक पक्ष का अध्ययन किया जा सकता है। हरलॉक (Hurlock; 1974) ने लिखा है कि अनुदैर्घ्य उपागम में किसी निश्चित व्यक्ति (प्रतिदर्श) का वैकासिक अध्ययन निश्चित रूप से दीर्घकाल तक किया जाता है जिसमें यह देखते हैं कि व्यक्तित्व प्रतिमान (Personality patterns) कितने स्थाई और कैसे तथा कब परिवर्तित होते हैं और किन कारणों से परिवर्तन होते हैं। (.....Under this method the same individuals would be studied, preferably from birth to death, but certainly for a long enough period to see just how persistent the personality pattern is, when and how it changes and what is responsible for the changes",)।

इस प्रकार जब उसी बालक या समूह का अध्ययन विभिन्न समय अन्तरालों पर अथवा विभिन्न आयु स्तरों पर बार-बार करते हैं तथा विकास के स्वरूप, गति, प्रगति, दिशा और अन्य लक्षणों को जानने का प्रयत्न करते हैं तो अनुदैर्घ्य उपागम का प्रयोग करते हैं। मान लें हम किसी बालक के क्रियात्मक विकास का अध्ययन करना चाहते हैं, तो उस बालक का 3 माह, 6 माह, 12 माह, 15 माह आदि विभिन्न समय अन्तरालों पर उसके करवट लेने, रेंगने, घिसकने, बैठने, खड़े होने, चलने, दौड़ने, उछलने, कूदने, नाचने, वस्तुओं को पकड़ने, लिखने, चम्मच से खाने, गेंद पकड़ने, गेंद फेंकने आदि क्रियाओं का प्रेक्षण करते हैं। विभिन्न आयु स्तरों पर इन क्रियाओं में कितनी वृद्धि या कमी आती है, अर्थात् विकास में आए परिवर्तनों का परिचय प्राप्त होता है।

स्कियाम्बर्ग तथा स्मिथ (Schiamberg and Smith, 1982) के अनुसार, अनुदैर्घ्य अभिकल्प एक ही बालक में समय की प्रगति के साथ आए परिवर्तनों का मापन करते हैं।" (Longitudinal design measures the changes that occur in single inidividual over a period of time)

सुविधाएँ (Advantages)

(i) अनुदैर्घ्य उपागम व्यक्ति में आए परिवर्तनों के प्रति प्रतिनिध्यात्मक उपागम से अधिक संवेदनशील है।

(ii) प्रत्येक बालक के विकास को समझने का अवसर देता है।

(iii) विवृद्धि में बढ़ोत्तरी के अध्ययन का अवसर देता है। यह सुविधा व्यक्ति और समूह दोनों स्तरों पर उपलबध होती है।

(iv) यह उपागम परिपक्वता तथा अनुभव प्रक्रियाओं के संबन्धों के विश्लेषण का अवसर प्रदान करता है। यह सुविधा इसलिए और भी महत्त्वपूर्ण है क्योंकि उसी प्रतिदर्श पर सारे प्रदत्त प्राप्त होते हैं।

(v) व्यवहार तथा व्यक्तित्व पर सांस्कृतिक तथा परिवेशीय कारकों के अध्ययन का अवसर प्रदान करता है।

असुविधाएँ (Disadvantages)

(i) इसमें प्रतिनिध्यात्मक उपागम की अपेक्षा अधिक समय लगता है। प्रदत्त संग्रह में कई वर्ष और कभी-कभी कई दशक लग जाते हैं।

(ii) यह उपागम अपेक्षाकृत अधिक खर्चीला है। (Zubeck Solberg, 1954)

(iii) प्रदत्त अति विस्तृत होते हैं, अतः उनको तालिकाबद्ध करना या उनका उपचार करना असुविधापूर्ण होता है।

(iv) चूँकि सम्पूर्ण अध्ययन के लिए (जो वर्षों चल सकता है) प्रतिदर्श चयन अध्ययन के आरम्भ में करते हैं, अतः यह बाद वाले प्रदत्तों को प्रभावित करता है।

Scanned by CamScanner

मृत्यु बीमारी या स्थानान्तरण के कारण मौलिक समूह में परिवर्तन आ जाता है। अपूर्ण केसेज़ के प्रदत्तों को निकाल देना चाहिए। (Anderson & Cohen, 1939)।

अनेक महत्त्वपूर्ण अध्ययन अनुदैर्घ्य उपागम द्वारा किए गए हैं। इनमें बर्कले (Berkley) अनुदैर्घ्य अध्ययन अत्यन्त प्रमुख है, जिसमें वर्षों तक बालक के सम्पूर्ण विकास का अध्ययन सुविख्यात है। बेली, ओडेन, आवेन्स तथा टरमन एवं ओडेन (Bailey, 1973; Oden, 1968; Owens, 1966; and Terman & Oden, 1969) ने बौद्धिक विकास का अनुदैर्घ्य अध्ययन किया। एमिस, जोन्स तथा जोन्स, एवं मसेन (Ames, 1957; Jones, 1965; and Mussen, 1958;) ने यौन संबन्धी परिपक्वता की आयु के सामाजिक व्यवहार तथा व्यक्तित्व पर दीर्घकालिक प्रभावों का अध्ययन किया। बूहलर, एरिक्सन, कागन तथा मास पेक तथा हेवीघर्स्ट, स्मिथ तथा अन्य (Buhler, 1968; Erickson, 1964; Kagan & Moss, 1962; Peek & Havighurst, 1962; Smith et. al, 1952) ने यह पाया कि बाल्यावस्था के व्यक्तित्व लक्षण, प्रौढ़ावस्था तथा वृद्धावस्था तक ज्यों-की -त्यों बनी रहती है। इसी प्रकार ब्रान्सन, कागन, मैकफारलेन तथा अन्य शैप्टर तथा अन्य और वाट्सन (Bronson, 1966; Kagan, 1964; Mcfarlane et al. 1954; Shashter et al 1968; and Watson, 1928;) ने व्यवहार तथा व्यक्तित्व पर बाल प्रशिक्षण विधियों के दीर्घकालिक प्रभावों का अध्ययन किया।

प्रतिनिध्यात्मक उपागम (Cross - sectional Approach)

इसे नार्मेटिव या समकालीन उपागम भी कहते हैं। इसके अन्तर्गत विभिन्न आयु के बालकों के विकास का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। इस उपागम में विभिन्न आयु के बड़े-बड़े समूह लिए जाते हैं। समस्या से सम्बद्ध गुण, योग्यता या व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। फिर प्रदत्तों के आधार पर औसत मान निकालते हैं और उसके आधार पर सम्बद्ध योग्यता या व्यवहार के विकास क्रम को ज्ञात करते हैं। औसत मान को उस आयु विशेष का मानक (Norm) मानकर उस आयु स्तर के अन्य व्यक्तियों की तुलना करते हैं। उदाहरण के लिए यदि आप विभिन्न आयु स्तर पर बालकों के शब्द-भंडार का अध्ययन करना चाहते हैं तो दो, चार, छः, आठ, दस, बारह, चौदह आदि वर्ष वाले बालकों के समूहों का चयन यादृच्छिक रीति से करेंगे। इस प्रकार विभिन्न आयु वाले समूहों के अध्ययन के आधार पर प्रत्येक समूह के लिए मानक ज्ञात करते हैं। इसी प्रकार विकास के विभिन्न क्षेत्रों-शारीरिक विकास या लम्बाई तथा भार, क्रियात्मक, सामाजिक या सांवेगिक विकास आदि के लिए मानकों का निर्माण करते हैं। इसी कारण यह नार्मेटिव (Normative) उपागम भी कहलाता है। इसमें अनेक समूहों का थोड़े समय में अध्ययन होता है। जुबेक तथा सालबर्ग (Zubeck & Solberg; 1954) के अनुसार, "अध्ययन के समय प्रत्येक आयु समूह (age level or group) का प्रतिनिधित्व करने वाले बालकों के समूहों से प्राप्त परिणाम की व्याख्या प्रतिनिध्यात्मक उपागम में किया जाता है। (".....cross sectional approach gather data and studies individuals who represeent the different age groups at the time each survey is made",)।

जान. ई. एण्डरसन (Jhon E. Anderson 1954) के अनुसार, इस उपागम में "विभिन्न आयु, वर्ग या अन्य स्तरों पर बालकों का मापन या परीक्षा कर सकते हैं, विभिन्न सामग्रियाँ उपलब्ध करा सकते हैं या तुलनीय परिस्थितियों में रखकर प्रेक्षण कर सकते हैं।" (Children at various ages grades, or other levels can be measured, tested or exposed to materials, or placed in comparable situations and observed)

हरलॉक (Hurlock) के अनुसार, " अब तक, विकास के अधिकांश अध्ययन, विकास की विभिन्न अवस्थाओं में उन्हीं योग्यताओं का प्रतिनिध्यात्मक तुलना के रूप में हुए हैं।" (Upto the present time, most of the studies of development have been crosssectional comparison of the same abilities at different stages of development.)

इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रतिनिध्यात्मक उपागम द्वारा अध्यन में विभिन्न आयु या वर्ग के यादृच्छिक रूप से चुने समूह के प्रयोज्यों की योग्यताओं, विशेषताओं या व्यवहारों का मापन या अध्ययन किया जाता है। इस तरह ऐसे उपागम द्वारा किसी विशेषता, योग्यता या व्यवहार के क्रमिक विकास के ज्ञान के अतितिरक्त विभिन्न आयु स्तरों के लिए मानक भी प्राप्त हो जाते हैं।

सुविधाएँ (Advantages)

इस उपागम द्वारा अध्ययन की प्रमुख सुविधाएँ निम्नलिखित हैं:

(i) कम समय में अपेक्षाकृत अधिक सूचना प्राप्त होती है। अनुदैर्घ्य उपागम में वर्षों या कई दशकों में जितनी सूचना प्राप्त होती है उतनी कुछ घंटों या दिनों में ही मिल जाती है।

(ii) वृद्धि प्रक्रिया के विषय में महत्त्वपूर्ण सूचना प्राप्त होती है। (एण्डरसन 1954)

(iii) इससे मानक प्राप्त होते हैं जिनकी सहायता से अन्य बालकों के निष्पादन की तुलना कर सकते हैं। (एण्डरसन 1954)

(iv) विभिन्न आयु स्तरों की अनूठी विशेषताओं का ज्ञान प्राप्त होता है जो अन्य उपागम से इतनी सुगमतापूर्वक नहीं होता है। (हरलॉक, 1975)

(v) यह उपागम अपेक्षाकृत मितव्ययी है। (हरलॉक, 1975)

(vi) एक प्रयोगकर्त्ता भी इस उपागम के द्वारा अध्ययन कर सकता है। (हरलॉक, 1975)

(vii) प्रयोज्यों के प्राप्ति की वह समस्या नहीं होती जो अनुदैर्घ्य उपागम में होती है, अर्थात् इसमें प्रयोज्यों की प्राप्ति सुलभ और सुगम है।

(viii) अध्ययनकर्त्ता को भविष्य में आने वाली विकास की अवस्था की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती, जेसे अनुदैर्घ्य उपागम में होता है।

(ix) अपेक्षाकृत कम प्रेक्षकों या अध्ययनकर्त्ताओं की आवश्यकता होती है।

Scanned by CamScanner

असुविधाएँ (Disadvantages of cross-sectional approach)

प्रतिनिध्यात्मक उपागम अत्यन्त उपयोगी है, किन्तु फिर भी इसकी कुछ न्यूनताएँ विशेष असुविधा उत्पन्न करती हैं। यह न्यूनताएँ निम्न हैं:

(i) समय के साथ व्यक्तिगत परिवर्तनों का कोई परिचय यह उपागम नहीं कराता।

(ii) पीढ़ी संबन्धी प्रभाव (Generational effects) विद्यमान हो सकते हैं। इसका अभिप्राय विभिन्न समयों में जन्म लेने से सम्बद्ध कारकों के परिणामों के प्रभावों से है।

(iii) प्रतिनिध्यात्मक उपागम सम्पूर्ण विकास के विषय में सूचना नहीं प्रदान करता। इसमें किसी निश्चित स्तर के विकास का ही बोध प्राप्त होता है।

(iv) हरलॉक (1975) के अनुसार यह उपागम विकास प्रक्रिया का लगभग शुद्ध प्रतिनिधित्व (Approximate representation) करता है।

यह उपागम आयु-समूह के भीतर परिवर्तनों की ओर ध्यान नहीं देता (हरलॉक 1975)। अर्थात् हर-एक आयु समूह के भीतर विद्यमान भिन्नताओं पर विचार नहीं करता।

हरलॉक (1975) के अनुसार यह उपागम सामाजिक- सांस्कृतिक परिवेश द्वारा व्यवहार पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन नहीं करता। सामाजिक- सांस्कृतिक भिन्नताओं का नियन्त्रण दुष्कर एवं दुलर्भ है और बिना नियन्त्रण प्राप्त किए प्रदत्तों पर भरोसा नहीं किया जा सकता।

इन दोनों उपागमों में अन्तरों में अन्तरों की चर्चा करते हुए हम कह सकते हैं कि प्रतिनिध्यात्मक उपागम चुने हुए आयु स्तर पर बालक की संस्थिति (Status) का बोध कराता है, अर्थात् इस बात की जानकारी देता है कि किस आयु में बालकों में वांछित क्षमताएँ या योग्यताएँ किस मात्रा में विद्यमान हैं किन्तु अनुदैर्घ्य उपागम विकास की प्रगति दिशा और गति सबका ज्ञान कराता है।

Scanned by CamScanner